भक्ति आंदोलन और तुलसी का काव्य

बुद्धिमान पटेल[1]
शोध छात्र - हिन्दी
अ.प्र. सिंह वि.वि., रीवा (म.प्र.)

डॉ.लाल बहादुर सिंह[2]
निर्देशक
सहायक प्राध्यापक-हिन्दी
शा.महा.सिहावल, जिला सीधी (म.प्र.)

भूमिका -

भक्ति आंदोलन का लक्ष्य है मानुष-सत्य या कि मनुष्यत्व की रक्षा और विकास। भक्ति काव्य की सम्पूर्ण रचनाशीलता इसी लक्ष्य की ओर उन्मुख है। भक्त कवियों की दृष्टि से मानुष सत्य के ऊपर कुछ भी नहीं है। न कुल, न जाति, न धर्म, न सम्प्रदाय, न स्त्री-पुरुष का भेद, न किसी जाति का भय और न लोक का भ्रम। इन सबका दुराग्रह हमेशा मनुष्यत्व के विकास में बाधक बनता है। इस लिए इन की भक्ति काव्य में निर्द्वंद और निर्भीक आलोचना है। समाज में तरह-तरह के भेद-भाव पर टिकी व्यवस्था की जगह मनुष्यत्व पर आधारित समता मूलक और मानवीय जनता के प्रेरणा और शक्ति पाती है। भक्ति की अलख यानी ईश्वर को जगाना है। भक्ति आंदोलन तेरहवीं-चौदहवीं और पंद्रहवीं शताब्दी में हुए महत्वपूर्ण राजनैतिक और आर्थिक परिवर्तनों के कारण बिकसित हुआ जो कबीर, नानक और रविदास की कविताओं में अपने चमोत्कर्ष पर मिलता है। यह आंदोलन नये परिवर्तनों की देन है।

मध्यकाल के हिन्दी साहित्य में भी छुट-पुट रूप से हमें इस संबंध में अनेक उदाहरण मिल जाते हैं। मुल्ला दाउद, कबीर, नानक और सूरदास का साहित्य विशेष रूप से दृष्टव्य है। ये व्यापारी देश के अंदर हो व्यापार नहीं करते थे। बल्कि दूसरे देशों में भी जाते थे। इनके साथ भारत की कला साहित्य और संस्कृति बाहर गई और वहाँ से अनेक विचारधारा और साहित्य भारत में आया।

यदि भक्ति आंदोलन के पास समकालीन समाज व्यवस्था के विकल्प की परिकल्पना का आभाव था। तो एक वैकल्पिक समाज व्यवस्था की कल्पना का आधार उस समाज की संकट ग्रस्त स्थिति में देखा जा सकता है। यह ऐसी संकट ग्रस्त स्थिति है जिसका समाधान एक नई सामाजिक और आर्थिक व्यवस्था की स्थापना में ही संभव है। ऐसी स्मृतियाँ और उनके समाधान यूरोप के इतिहास में बहुत स्पष्ट रूप देखे जा सकते हैं। जब दास प्रथा पर आधारित समाज के संकट का समाधान सामंती समाज तंत्र में ही सम्भव हुआ और सामंती समाज के संकट का समाधान करने के लिए पूँजीवादी व्यवस्था स्थापित हुई। जिसके पश्चात् समाजवाद का उदय हुआ।

भक्ति कालीन संतों ने छोटे किसान, जुलाहे और अन्य छोटे-छोटे व्यक्तियों की तुलना ईश्वर की है। इस तरह इन छोटे-छोटे लोगों के स्तर को अपनी कल्पना से ऊचा उठाया है। उन्होंने यह कल्पना ईश्वर और उसके दरवार के प्रतिरूप में की है। दाददयाल ईश्वर को साहिब सुल्तान, महाराजा राव आदि की संज्ञा देते हैं और उनके दरवार में दासियों, कवियों, नर्तकियों, नगाड़े बजाने वाले, खजानची और दूतों की उपस्थिति की कल्पना करते हैं। इस दरवार में सम्राट के सभी कर्मचारी मौजूद रहते हैं।

भक्ति भाव - आज भारतीय समाज एक विकट संकट से गुजर रहा है। यह संकट जितना सामाजिक और राजनीतिक उससे अधिक सांस्कृतिक है। क्योंकि संस्कृत गोला-बारूद से ही राजनीतिक की लड़ाई चल रही है। सांस्कृतिक प्रतिक राजनैतिक युद्ध अस्त्र-शस्त्र अपनाये जा रहे हैं। इस संस्कृति की राजनीति से नई संस्कृति जो पैदा हो रही है। वह धार्मिक उन्माद साम्प्रदायिक संकीर्णता और मानव द्रोह की आंधी पर सवार होकर आगे बढ़ रही है। और भक्ति आंदोलन के उदात्त मानवीय मूल्यों सामाजिक आदर्शों और सांस्कृतिक आकांक्षाओं की विरासत को तहस -नहस कर रही है।

कलयुग केवल नाम अपारा।
सुमरि सुमरि नर उतरहि पारा।।
कृत युग सब योगी विज्ञानी।
करि हरि ध्यान तरहि भव प्राणी।।

तुलसी दास भक्तिकाल और भक्ति आन्दोलन की परिधि के एक महत्वपूर्ण कवि के रूप में स्थापित है। जिनकी लोकप्रियता आज भी बरकार है। वह अपने कवित्व के लिए लोकप्रिय हैं या विचार के कारण या फिर धार्मिक रचना के कारण। जाहिर सी बात है कि उनकी लोकप्रियता का इनमें से कोई एक कारण नहीं बल्कि सभी का एक साथ समन्वय के कारण उनकी लोकप्रियता बनी हुई है। तुलसी का समय भारत के राजतन्त्र का समय है और अब लोकतंत्र का संवैधानिक भारत है। स्वाभाविक है कि हमारी किसी रचना के प्रासंगिक और कालजयी होने का आधार आधुनिक संदर्भ होगा। इस परिप्रेक्ष्य में जब हम तुलसी को देखते हैं तो तुलसीदास कई बार जटिल कवि के रूप में सामने आते हैं जिनको समझना कई बार लगता है कठिन है।

आधुनिक समय में तुलसी के इन सब विचारों से कत्तई भी सहमत नहीं हुआ जा सकता है। इनका रामराज्य विसंगतियों से भरा हुआ है। इसमें कोई संदेह नहीं की तुलसीदास वर्णव्यवस्था के कट्टर समर्थक थे। उन पर परम्परा का गहरा प्रभाव दिखाई देता है। वह प्रभाव वर्णव्यवस्था और ब्राह्मणों के प्रति अनावश्यक रूप से आस्थावान बना देता है। तुलसी के रामराज्य में अयोध्यावासी उदार, परोपकारी ही नहीं, विप्रों के चरणसेवक भी हैं-

सब उदार सब पर उपकारी।
बिप्र चरण सेवक नर नारी।।

भारत में हिंदुत्व की राजनीति का आधार भी राम ही रहे है न कि कृष्ण। कबीर के यँहाँ जो क्रांतिकारिता और ओज मिलता है समाज के बुनियादी समस्या से टकराने का जो साहस है उस रूप में तुलसी हमें निराश करते है। तुलसी यहाँ ऐसा लगता है कि जैसे उन्होंने पूरे भक्ति आन्दोलन को हथियाकर वर्णाश्रम और ब्राह्मण धर्म का विजय पताका फहरा दिया हो। भक्ति आन्दोलन का जो जनवादी रूप था, जाति विरोधी जो भूमिका थी उसके विरुद्ध तुलसीदास पुराण मतवादी स्वरूप को प्रस्तुत करते दिखाई देते हैं। गोस्वामी तुलसीदास जी ने भगवान राम के चरण कमलों अनुरक्त एवं उनकी पूजा अर्चना को ही सर्वश्रेष्ठ धन कहा है -

श्लोक -

आन्नद काननें हास्मि अंगजमस तुलसी तरू:।
कविता मंजरी भाँति, राम भ्रमर भूषिता।।

भावार्थ - काशी रूपी आंनद वन में तुलसीदास जी तुलसी का एक सुन्दर चलता फिरता पौधा है। जिनकी कविता रूपी मंजरी बड़ी ही सुन्दर है जिसमें राम रूपी भवरा सदा मडराया करता है। तुलसीदास जी ने अपने काव्य में नवधा भक्ति काव्य जो वर्णन किया है। बहुत ही मार्मिक और रोचक है। नवधा भक्ति को पड़ने, सुनने में जो आनन्द आता है। उसका वर्णन करना संसारीजन मानस के बस की बात नहीं हैं। गोस्वामी तुलसीदास जी के कृतित्व के इस समीक्षण से अनेक बाते स्पष्ट होती है।

जिनको ध्यान में रखकर न चलने से हम उनके किसी एक पक्ष की गहराई में ही गोते लगाते रहते हैं और उस विशाल रचनाकार के दूसरे छोड़ पर क्या है यह नहीं जान सकते हैं। रामचरित मानस उनकी महती कृति है। फिर भी उनकी महती कृतिया भी अपनी अलग विशेषताओं से सम्पन्न है। यह भी हमारे लिए समझना आवश्यक है। तुलसी दास के दृष्टि कोण में भक्ति भाव प्रधान रूप से होते हुए भी उनकी भावना सामाजिक है। अतएव देश और समाज की रीति-नीति और संस्कृति का जो रूप हमारे सामने रखा है। उससे उनके सामाजिक और राजनैतिक आदर्श स्पष्ट होते हैं।

दिव्य दूर दृष्टि -तुलसी जी की दृष्टि निज वाणी की पावनता तक ही सीमित नहीं विशाल जन समुदाय भी निरंतर उनकी दृष्टि में रहा है। काव्य कला की उपयोगिता जनहित में ऐसी उनकी स्पष्ट धारणा है-

कीरति भनिति भूति भलि सोई। सुरसरि सम सब कहहित होई।।

गंगा के लोक मंगलकारी स्वरूप के संबंध में प्रचलित जन विश्वास को तुलसी ने यहाँ कविता के साथ अत्यंत सार्थक रूप से सम्बद्ध किया है। लोक मंगल की संभाव्यता उसकी रचना में होगी जो भ्रम और पाप ताप के निवारण में समर्थ है। भक्तिकालीन कवियों की इस अवधारणा के संबंध में हिन्दी के विभिन्न समीक्षकों की प्रतिक्रियाओं का आकलन उचित होगा।

गुलाबराय के अनुसार- तुलसी का सृजन सिद्धांत हित समन्वित हृदयवाद था। भागीरथ मिश्र ने इस संबंध में यह तथ्य उद्धारित किया है। हित करने वाली कविता वही हो सकती है। जो हमारे यथार्थ जीवन के तत्व धारण करती हो। विश्वनाथ प्रसाद मिश्र के मत में तुलसी ने केवल ''स्वान्तः सुखाय'' काव्य रचना नहीं की है। अपितु परान्तः सुखाय का भी उन्होंने ध्यान रखा है। तारक नाथ वाली ने भक्ति कालीन साहित्य की प्रासंगिकता निबंध में अत्याधुनिक संदर्भ में इसकी व्याख्या इन शब्दों में की है। भक्तिकालीन का व्यापक सामाजिक सत्य से संपृक्त है। मगर इस संपृक्त का मूलगुण अध्यात्म है। इस विषय में सभी एक मत है कि युगीन मूल्यों से अनुबद्ध हितवादिता कविता के अत्यधिक धर्म में से एक हैं।

तुलसी दास रामचरित मानस के बजाय अपने दूसरी रचनाओं में यथार्थ के ज्यादा करीब दिखाई देते है। कवितावली, दोहावली और विनय पत्रिका में उनके जीवन का यथार्थ खुलकर आया है।

खेती न किसान को भिखारी को न भीख
बलि बनिक को न बनिज न चाकर को चाकरी
जीविका विहीन लोग सीदमान सोचबस,
कहै एक एकन सौ कहाँ जाई का करी।

तुलसी के समय भक्ति आंदोलन अपने चरम पर था। उत्तर और दक्षिण में कई धामक विचार और संप्रदाय फैले हुए थे। दक्षिण में आलवार और नायनार संत-भक्तों ने भक्ति को प्रपत्ति से जोड़कर जनसाधारण के लिए सुलभ कर दिया। आंशिक प्रतिरोध के बाद भक्ति के लिए वर्ण और जाति की बाधाएं भी खत्म हो गई थीं। रामानुजाचार्य, विष्णु स्वामी, मध्वाचार्य, वल्लभाचार्य आदि विचारकों ने भक्ति को एक दार्शनिक आधार भी दे दिया था। रामानंद आदि के माध्यम से दक्षिण का भक्ति आंदोलन उत्तर भारत में भी लोकप्रिय हो रहा था, लेकिन यहां स्थिति अलग थी। यहां दक्षिण से अलग जनसाधारण में अभी भी बौद्धमत की जड़ें थीं और उससे भी अधिक यहां इस्लाम मौजूद था और खास बात यह कि यह शासकों का धर्म था। भक्ति आंदोलन ने यहां प्राप्ति के साथ बौद्धमत और इस्लाम के प्रभाव में अलग रूप भी धारण किया। बोद्ध मत की परंपरा यहां सिद्धों और नाथों से होती हुई संत मत तक आई। संत मत ने समाज में जीवन विरत साधु-संयासियों को खूब को प्रश्रय दिया। भक्ति आंदोलन ने न्याय और समता आधारित जीवन और व्यवस्था के लिए माहौल बनाया, लेकिन इससे शैव, शाक्त, वैष्णव जैसी संकीर्णताएं और मत-मतांतर भी बढ़े। एक और परिवर्तन हुआ- श्रीच समझी जाने वाली जातियों में कई पहुंचे हुए महात्मा हो गए थे, उनमें आत्मविश्वास का संचार हो गया था, पर, जैसा कि साधारणतरू हुआ करता है, शिक्षा और संस्कृति के अभाव में यही आत्मविश्वास दुर्वह गर्व का रूप धारण कर गया थाश् तुलसी भक्ति आंदोलन के इन बनते-बिगड़ते रूपों से अवगत थे। उन्होंने रामचरितमानस अपनी राह इन सबके बीच में रहकर, इनके साथ अंतर्क्रिया से बनाई। भक्त कवियों ने राम के नाम को आराम से बढ़कर माना है। इस संबंध में गोस्वामी तुलसीदास जी लिखते हैं-

राम सो बड़ो है कौन,मोसों कौन छोटा?
राम सो खरो है कौन,मोसों कौन खोटो?

तुलसीदास ने मानस में,गुरु वंदना करते हुए कहा है कि-

'बंदउ गुरु पद कंज, कृपा सिंधु नर रूप हरि '!

तुलसीदास जी को सगुण भक्ति काव्य धारा में इसीलिए शामिल किया गया कि वह सगुण उपासकों में से प्रतिष्ठित कवि हैं। सगुण विचारधारा का कवि ईश्वर को सगुण यानी सभी गुणों से युक्त परम उससे भी परे साकार यानी कि वह ईश्वर जगत में रूप धारण करके अवतरित होता है।

भक्ति आन्दोलन के सन्तों ने सभी धर्मो की आधारभूत समानता पर बल दिया। एकेश्वरवाद का प्रचार किया। भक्ति आन्दोलन का भारतीय इतिहास में विशेष महत्व है। इसने भक्ति का अक्षय स्त्रोत खोल दिया। संस्कृत तथा क्षेत्रीय भाषाओं के साहित्य में वृद्धि हुई। मध्यकाल में भक्ति आन्दोलन से समाज सुधार के साथ-साथ साहित्य, धर्म, की कीर्ति में वृद्धि हुई।

तुलसीदास जी ने सभी क्षेत्रों में भक्ति आंदोलन चलाकर सांसारिजन मानस को निर्गुण, भक्तिधारा से सगुण भक्तिधारा की ओर मोड़ देने का काम किया है। रामचरितमानस काव्य शास्त्र उसका जीता जागता उदाहरण है। भक्तिभाव, भक्ति रस, भक्तिमार्ग को काव्य में प्रतिपादित कर धर्म के क्षेत्र में सभी को जोड़ने का काम किया है। नवधां भक्ति को कलात्मक रूप से एवं श्रवण के माध्यम से लोगों के बीच में अलख जगाकर भक्ति भाव, भक्तिरस भरने का काम किया है। मानव सम्यता के आदिकाल से ही उसने अपनी परिस्थितियों और वातावरण को समझने का सतत् प्रयास किया है। सुवरी जायसवाल के शब्दों में विभिन्न धार्मिक आस्थाए इस प्रक्रिया की उपज है और उनकी मानव के सामाजिक एवं भौतिक परिवेश से घनिष्ट संबंध है। परन्तु यह द्वन्द्वात्मक है। यंत्रवत निर्धारित नहीं जहा एक ओर धार्मिक आस्थाओं का मूल मनुष्य के सामाजिक और पार्थिक परिवेश में खोजा जा सकता है। वही यह भी निश्चित है। उसके धार्मिक एवं नैतिक आदर्श अक्सर मार्ग चयन में उसका दिशा निर्देश करते हैं और इस प्रकार उसके परिवेश के निरूपण में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं। भक्त विचार धारा के ऐतिहासिक अध्ययन से यह बात स्पष्ट रूप से चरितार्थ होती है। भक्ति का नाम भगवान है भक्ति का लिया भगवान को पाने के बराबर है। तुलसी, कबीर, मीरा, केशव, सूर इत्यादि जितने भी भक्तिधारा के कवि है भक्तिरस से सराबोर होकर भक्तिभाव भरेन का काम पूरे जगत के प्राणीओं में किया है। इन कवियों के योगदान को भुलाया नहीं जा सकता है, तुलसी दास जी ने अपने काव्य में भक्ति की धारा वह दिये है। इसीलिए वे आज पूरे जगत में प्रसिद्ध है। उन्होंने अपने कवितावली दोहा बली में कूट-कूट कर देखने को मिलता है। तुलसी दूर दृष्टा से वे वर्तमान भूत भविष्य सबके ध्यान में रखकर भौतिक जगत को दिशा देने का काम किया है।

****

संदर्भ:-
1. हिन्दी भक्ति साहित्य दिल्ली 1965, पृ. 57, 72
2. पदमावत जायसी, ग्रंथावली काशी पृ. 334
3. रामचरित मानस प्रथम सोपान, सं. 7
4. लोकवादी तुलसी दास- विश्वनाथ प्रसाद त्रिपाठी
5. भक्ति आन्दोलन का एक पहलू- मुक्तिबोध
6 .दोहावली- तुलसी दास